तथा कर्मफल की शृंखला चल पड़ती है। परा प्रकृति का अंश होने से जीव वास्तव में ज्ञानमय है। फिर भी अल्प सामर्थ्यवश वह अज्ञानमग्न हो जाता है। श्रीभगवान् सर्वसमर्थ हैं, परन्तु जीव नहीं। श्रीभगवान् विभु हैं, जबकि जीव अणु है। जीवात्मा को इच्छा करने की स्वतन्त्रता तो प्राप्त है, परन्तु उसकी पूर्ति करना केवल सर्वसमर्थ श्रीभगवान् के हाथ में है। अतः जब इच्छाओं से जीव विमोहित हो जाता है, तो श्रीभगवान् उसे अपनी इच्छा-पूर्ति करने देते हैं; पर किसी भी अभिलाषित परिस्थिति के कर्म और कर्मफल के लिए वे स्वयं उत्तरदाता नहीं हैं। इस प्रकार मोह के वशीभूत हुआ बद्धजीव प्रासंगिक प्राकृत देह को अपना स्वरूप समझ कर जीवन के क्षणिक दुःख-सुख भोगता है। परमात्मा के रूप में श्रीभगवान् जीव के नित्य सहचर हैं। वे जीवात्मा की इच्छा जान सकते हैं, उसी भाँति जैसे समीपवर्ती पुण्य की सौरभ को सूंघा जा सकता है। वासना जीवात्मा के बन्धन का सूक्ष्म रूप है। श्रीभगवान् उसकी कामना को यथायोग्य पूरा करते हैं। स्वयं अपनी इच्छा को पूर्ण करने की शक्ति का जीव में अभाव है; परन्तु श्रीभगवान् सर्वसमर्थ वाञ्छाकल्पतरु हैं। प्राणीमात्र में उनका समभाव है, इसलिए अणु स्वतन्त्रता वाले जीवों की इच्छाओं में वे हस्तक्षेप नहीं करते। विशेष रूप से जब कोई स्वयं श्रीकृष्ण की इच्छा करता है तो वे विशेष ध्यान देते हैं और उसे इस प्रकार प्रोत्साहित करते हैं कि वह उन्हें प्राप्त हो कर शाश्वत् सुख का आस्वादन कर सके। वैदिक मन्त्रों का उद्घोष है:

एष उह्येव साधु कर्म कारयति तं यमेभ्यो लोकेभ्य उन्निनीषते।
एष उ एवासाधु कर्म कारयति यमधो निनीषते।।
अज्ञो जन्तुरनीशोऽयमात्मनः सुखदुःखयोः।
ईश्वरप्रेरितो गच्छेत् स्वर्गं वाश्वभ्रमेव च।।

'जीव के उत्थान के लिए श्रीभगवान् उसे सत्कर्म में प्रवृत्त करते हैं और असत्कर्म में इसलिए लगाते हैं, जिससे वह नरकगामी हो। जीवात्मा अपने सुख-दुःख में पूर्णतया परतन्त्र है। वायुप्रेरित मेघ की भाँति भगवत्-इच्छा से ही वह स्वर्ग अथवा नरक में जाता है।'

अस्तु, कृष्णभावनामृत की उपेक्षा करने की अपनी अनादिकालीन प्रवृत्ति के कारण बद्धजीव अपने बन्धन का स्वयं कारण बनता है। स्वभावतः सच्चिदानन्दमय होते हुए भी अपनी बद्ध, अल्प सत्ता के कारण वह यह भूल जाता है कि स्वरूप से वह भगवान् का दास है और परिणाम में मायाबद्ध हो जाता है। अज्ञान-आवरण के वश में ही जीव ऐसा कहता है कि उसके भवबन्धन के लिए श्रीभगवान् उत्तरदायी है। वेदान्त से यह समर्थित है:

वैषम्य नैर्घृण्ये न सापेक्षत्वात् तथा हि दर्शयति।

'प्रभु वास्तव में किसी के भी प्रति घृणा अथवा आसक्तिभाव नहीं रखते।